25

दो मार्ग

(पहाड़ी उपदेश, 2)

बाइबल पाठ #9

V. दूसरे से तीसरे फसह तक (क्रमशः)।
   च. पहाड़ी उपदेश (क्रमशः)।
      6. सांसारिक चिंताओं के विपरीत स्वर्गीय भंडार सुरक्षित (मत्ती 6:19-34)।
      7. दोष लगाने पर शिक्षा (मत्ती 7:1-6; लूका 6:37-42)।
      8. प्रार्थना पर शिक्षा (मत्ती 7:7-11)।
      9. सुनहरी नियम (मत्ती 7:12; लूका 6:31)।
      10. दो मार्ग-और झूठे भविष्यवक्ता (मत्ती 7:13-23; लूका 6:43-45)।
      11. निष्कर्ष और प्रासंगिकता (दो मकान बनाने वाले) (मत्ती 7:24-29; लूका 6:46-49)।

परिचय

जॉन स्टॉट ने लिखा है,

> पहाड़ी उपदेश सम्भवतया यीशु की शिक्षा का सबसे प्रसिद्ध भाग है, यद्यपि इसकी समझ बहुत कम है, और निश्चय ही सबसे कम पालन किया जाने वाला है। यह उसके मुंह से निकले मैनिफेस्टो की निकटतम बात है, क्योंकि यह उसकी अपनी व्याख्या है कि वह अपने अनुयायियों को क्या बनाना और उनसे क्या करवाना चाहता था।[1]

इ. स्टैनली जोन्स ने कहा है, "आधुनिक मसीहियत की सबसे बड़ी आवश्यकता व्यावहारिक जीवन के एकमात्र ढंग के रूप में पहाड़ी उपदेश की फिर से खोज करना है।"[2] हार्वे स्कॉट ने मत्ती 5-7 को "मसीहियत का संविधान"[3] कहा है।

यदि हमें पहाड़ी उपदेश पर एक सौ किताबें भी लिखनी पड़ें, तो भी हम इसकी शिक्षाओं से ऊबेंगे नहीं। इस श्रृंखला में हम पहाड़ी उपदेश की बातों को संक्षेप में देख सकते हैं। "परन्तु मैं तुम से कहता हूं" पाठ में इस उपदेश के पहले भाग की समीक्षा की गई है और इस पाठ में आगे चर्चा की जाएगी।

इस उपदेश में कई विषमताएं हैं। पहले भाग में यहूदियों द्वारा पाई जाने वाली शिक्षा और यीशु की शिक्षा में अन्तर स्पष्ट किया गया है। दूसरे भाग में मनुष्य द्वारा चलने के लिए चुने जाने वाले दो मार्गों में भिन्नता बताई गई है। मसीह ने अपने सुनने वालों से आग्रह किया है कि "सकेत[4] फाटक से प्रवेश करो, क्योंकि चौड़ा है वह फाटक और सरल है वह मार्ग जो विनाश को पहुंचाता है; और बहुत से हैं जो उस से प्रवेश करते हैं। क्योंकि सकेत है वह फाटक और कठिन है वह मार्ग जो जीवन को पहुंचाता है, और थोड़े हैं जो उसे पाते हैं" (मत्ती 7:13, 14; नया अनुवाद)। मत्ती 6:19-7:27 में उन दो मार्गों के कई उदाहरण मिलते हैं, जिन पर हम चल सकते हैं। इस अध्याय में उन दो पसन्दों अर्थात जीवन की ओर ले जाने वाली पसन्द ... या विनाश की ओर ले जाने वाली पसन्द को बताया गया है, जिसमें से एक को हम चुन सकते हैं।

पृथ्वी या स्वर्ग (मत्ती 6:19-24)

अध्ययन के इस पहले भाग में बहुत-सी विषमताएं हैं, जिनका अभी तक उल्लेख ही किया गया है। मत्ती 6:19-21 में पृथ्वी पर धन इकट्ठा करने और स्वर्ग में धन इकट्ठा करने के बीच अन्तर बताया गया है। 22 और 23 आयतों में हमें उजियाले से भरे होने और अन्धकार से भरे होने में अन्तर मिलता है। आयत 24 दो सम्भावित स्वामियों अर्थात परमेश्वर और धन के बारे में बताती है। तीनों विषमताओं का एक ही विषय से सम्बन्ध है कि हमारा ध्यान पृथ्वी पर है या स्वर्ग में लगा हुआ है?

धन (आयत 19-21)[5]

यीशु ने अपने चेलों को पृथ्वी पर नहीं, बल्कि स्वर्ग में धन इकट्ठा करने की चुनौती दी।[6] उसने ज़ोर देकर बताया कि पृथ्वी का धन चंचल है[7] और केवल स्वर्ग का धन ही टिकाऊ है (आयतें 19, 20)। वह भविष्य के लिए प्रबन्ध करने का कोई नियम नहीं बता रहा था, बल्कि उसने सम्पत्ति को एक लक्ष्य मानने की निंदा की। उसकी मुख्य दिलचस्पी व्यक्ति की प्राथमिकताओं में थी: "... जहां तेरा धन है वहां तेरा मन भी लगा रहेगा" (आयत 21)। यह भी सत्य है कि जहां तेरा मन है, वहां तेरा धन भी रहेगा।

आंखें (आयतें 22, 23)[8]

यीशु ने उस समय के लोगों में प्रचलित एक रूपक का इस्तेमाल करते हुए सही प्राथमिकताओं के महत्व को समझाया: आंख का इस्तेमाल मन को दिखाने के लिए किया गया। पुराना नियम सिखाता था कि "दया करने वाले [मूलत:, "अच्छी आंख वाले"[9]] पर आशीष फलती है" (नीतिवचन 22:9क)। जबकि "लोभी जन धन प्राप्त करने में उतावली करता है" (नीतिवचन 28:22क)।[10] जैसे आंख शरीर के लिए है, वैसे ही मन आत्मा के लिए है।[11] आज हम इसी अलंकार का इस्तेमाल तो नहीं करते, परन्तु जीवन को "देखने" के अपने ढंग के लिए ऐसे ही बात करते हैं।

मसीह का उदाहरण सरल है कि यदि किसी मनुष्य की शारीरिक आंखें अच्छी हैं तो वह ''उजियाले से भरा'' है; परन्तु यदि वह अन्धा है तो वह ''अन्धकार से भरा'' है। इसी प्रकार, यदि किसी का मन अच्छा है (इस संदर्भ में, स्वर्ग पर लगा है), तो वह आत्मिक उजियाले से भरा है; परन्तु यदि उसके मन में बुराई है (अर्थात, संसार पर लगा है) तो वह आत्मिक अन्धकार से भरा हुआ है।

स्वामी (आयत 24)[12]

हम में से हर एक को अपने जीवन में वही निर्णय लेना चाहिए जो अधिक महत्वपूर्ण हो। हम परमेश्वर की सेवा कर सकते हैं या इस संसार के दास बन सकते हैं–परन्तु दोनों काम एक साथ नहीं हो सकते। हमें परमेश्वर और धन में से एक को चुनना होगा। KJV बाइबल में प्रयुज्त ''mammon'' शज़्द का इस्तेमाल सांसारिक धन के लिए कसदियों से लिया शज़्द था।[13]

चिंता या विश्वास (मज़्ती 6:25-34)

अगला भाग पूरे उपदेश में सबसे व्यावहारिक (और विश्वव्यापी तौर पर सबसे महत्वपूर्ण) है। यह भाग चिंता करने के पाप के बारे में है। यदि आपने कभी चिंता की है तो अपना सिर झुका लें। यदि आपका सिर अभी तक झुका नहीं है तो मुझे आश्चर्य होगा। निजी पापों की मेरी सूची में चिंता को प्रमुख स्थान दिया गया है।

मज़्ती 6:25–34 पिछली आयतों के साथ बहुत जुड़ी हुई है: यदि हमारा ध्यान इस पृथ्वी की बातों पर रहता है, तो हम चिंता अवश्य करेंगे। यदि हमारा ध्यान स्वर्ग पर है, तो चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जॉन फ्रैंज़्लिन कार्टर ने इन आयतों को यह कहकर संक्षिप्त किया है कि चिंता ...

1. अनावश्यक है, ज़्योंकि ... जब परमेश्वर पक्षियों तथा फूलों के लिए भोजन उपलज़्ध कराता है, तो निश्चय ही वह अपने सेवकों की आवश्यकताओं को भी अवश्य पूरा करेगा (आयतें 26, 28–30)।
2. बेकार है, ज़्योंकि ... जिस प्रकार उज़्तेजित होने से किसी का महत्व बढ़ नहीं सकता, वैसे ही इससे कोई आवश्यक लाभ नहीं होगा (आयत 27)।
3. अनुचित [अनुपयुज़्त] है, ज़्योंकि मसीही व्यज़्ति के लिए, जीवन का अर्थ भोजन से अधिक और शरीर की सजावट से अधिक होना चाहिए। इसके अलावा, इन बातों की चिंता करके मसीही व्यज़्ति अपने आप को ... मूर्तिपूजकों ... की श्रेणी में ले आता है (आयतें 25, 32)।[14]

चिंता पर काबू पाने के रहस्य का संकेत चिंता के यीशु के चित्रण ''हे अल्प-*विश्वासियो*'' (आयत 30ख) में मिलता है। चिंता पर काबू पाने की कुंजी विश्वास अर्थात परमेश्वर में विश्वास करना है, जो हमारे मांगने से पहले जानता है (आयत 32) और जो

जीवन की हमारी आवश्यकताएं तभी पूरी करेगा, *यदि* हम ''पहले उसके राज्य और धर्म की खोज''[15] करें (आयत 33)। परमेश्वर तो परमेश्वर है, इसलिए वह जानता है; क्योंकि वह हमारा पिता है, इसलिए हमारी देखभाल करता है।[16]

यीशु भविष्य के बारे में सोचने के विरुद्ध शिक्षा नहीं दे रहा था, परन्तु जायज तौर पर सोचने और बिना सोचे समझे मिलकर करना, जिससे हमारी ऊर्जा कम हो और हम भविष्य की चुनौतियों का सामना करने की क्षमता खो बैठें, में अन्तर है। यीशु आगे की योजना बनाने के विरुद्ध नहीं था[17]; भण्डारीपन का सिद्धान्त[18] हमें अपने पूरे यत्न से आने वाले कल की तैयारी करने के लिए प्रेरित करता है। परन्तु तैयारी कर लेने के बाद हमें सब कुछ परमेश्वर के हाथ में छोड़ देना चाहिए और चिंता नहीं करनी चाहिए।

न्याय करना या दोष लगाना (मत्ती 7:1-6; लूका 6:37-42)

भौतिक सम्पत्तियों के प्रति चेलों के व्यवहार से यीशु दूसरों के प्रति अपने व्यवहार के बारे में बताने लगा। मत्ती 7:1-5 दोष लगाने वाला मन होने की निंदा करता है।[19] कई लोगों का मत है कि इन आयतों में किसी भी प्रकार के न्याय की मनाही की गई है, परन्तु यीशु ने खुद ''ठीक-ठीक न्याय'' (यूहन्ना 7:24) करने के लिए कहा। न्याय करने की आवश्यकता हमारी इन आयतों में दर्शायी गई है: मत्ती 7:6 ''पवित्र वस्तु कुत्तों को'' न देने या ''मोती सूअरों के आगे'' न डालने के लिए कहता है, जिसमें उन लोगों की परख करने का संकेत है, जिन्हें हम सिखाते हैं। मत्ती 7 अध्याय की 1 से 6 आयतें एक साथ पढ़ने पर, पता चलता है कि यीशु न्याय करने से नहीं, बल्कि कठोर, दया रहित और सहानुभूतिहीन मन से न्याय करने को मना कर रहा था।

इस उपदेश के लूका के वृत्तांत में, यीशु ने अन्धों के अन्धे अगुओं और उनके चेलों पर एक टिप्पणी जोड़ी है (लूका 6:39)।[20] बाद में यीशु ने फरीसियों को ''अन्धे को मार्ग दिखाने वाले अन्धे'' कहा (मत्ती 15:12, 14)। मसीह फरीसियों को और दूसरों के प्रति फरीसियों जैसा व्यवहार करने वाले किसी भी व्यक्ति को डांट रहा था।

उलझन या प्रार्थना (मत्ती 7:7-11)

इस उपदेश को समाप्त करने से पहले (आज्ञाकारिता पर निर्देश देकर), यीशु ने दो सामान्य भाग शामिल किए, जिनसे उसके सुनने वालों को उसके द्वारा दी गई चुनौतियों का सामना करने में सक्षम होना था। इन आयतों में विषमताएं स्पष्ट नहीं हैं, परन्तु उनका अर्थ मिलता है। पहली विषमता (मत्ती 7:7-11) हठ से प्रार्थना करने की शक्ति पर है। यह चिंता के भाग के आगे की कड़ी लग सकती है: यदि चेलों को कल की चिंता नहीं करनी चाहिए, तो फिर वे प्रार्थना क्यों करें ? उन्हें प्रार्थना करनी चाहिए। 7 से 11 आयतें मानवीय सम्बन्धों पर दो भागों (7:1-6 और 7:12) के बीच आती हैं। इस प्रकार इन आयतों से हमें पता चलता है कि लोगों के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रार्थना आवश्यक है।[21] इस हवाले के

ज़ोर (और इसमें शामिल अन्तर) को संक्षिप्त करने के लिए मैंने इस भाग के शीर्षक में ''उलझन'' शज़्द का इस्तेमाल किया है: भविष्य या सज़्बन्धों या किसी अन्य आत्मिक चुनौती के बारे में उलझन में पड़ने के बजाय, भरोसा और प्रार्थना।

7 और 8 आयतों में मुज़्य शज़्द ''मांगो,'' ''ढूंढ़ो'' और ''खटखटाओ'' हैं। इन शज़्दों की क्रमबद्धता हमारी प्रार्थनाओं में बढ़ने वाली तीव्रता का सुझाव देती है। इसके अलावा मूल लेख में वर्तमानकाल का इस्तेमाल किया गया है, जो निरन्तरता का अर्थ देता है: मांगते रहना; ढूंढ़ते रहना; खटखटाते रहना। यीशु प्रार्थना करते रहने की आवश्यकता पर ज़ोर दे रहा है (देखें लूका 18:1)।

हमें ढीठ होकर प्रार्थना ज़्यों करनी चाहिए? ज़्योंकि हमारा परमेश्वर हम से प्रेम करता है और वह हमारी प्रार्थनाओं का उज़्र देगा (देखें याकूब 5:16ख-18)। मसीह ने सांसारिक पिताओं द्वारा अपने बच्चों को देने का उदाहरण देकर इस पर ज़ोर दिया (आयतें 9, 10)। ऐसे ही, हमारा स्वर्गीय पिता भी हमें देगा (आयत 11)।[22]

एक दिलचस्प संयोग से ''मांगो,'' ''ढूंढ़ो,'' और ''खटखटाओ'' के लिए अंग्रेज़ी शज़्दों ''ask,'' ''seek,'' और ''knock'' के पहले अक्षर ''a,'' ''s,'' और ''k'' का जोड़ ''ask'' बनता है, जिसका अर्थ ''मांगना'' है। याकूब ने लिखा है, ''... तुज़्हें इसलिए नहीं मिलता, कि मांगते नहीं'' (याकूब 4:2)। जीवन की कोई भी चुनौती हो, यीशु चाहता है कि हम ''परमेश्वर से मांगें, जो बिना उलाहना दिए सब को उदारता से देता है'' (याकूब 1:5)।

खुद या दूसरे (मज़्ती 7:12; लूका 6:31)

अगला भाग केवल एक आयत है। यद्यपि इस विचार को उपदेश के अगले भाग में शामिल किया जा सकता था, परन्तु इसे अकेला ही रखना आवश्यक है। इस आयत में यह सिद्धान्त भी मिलता है, जिसे सुनहरी नियम कहा जाता है: ''जो कुछ तुम चाहते हो कि मनुष्य तुज़्हारे साथ करें, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो। ...'' (मज़्ती 7:12क)।[23]

जैसा पहले कहा गया है कि इसमें भिन्नता स्पष्ट नहीं है, बल्कि उसका संकेत मिलता है, परन्तु उसे पहचानना आसान है। दूसरों के साथ व्यवहार में हमारा ध्यान अज़्सर इस बात पर होता है कि *हमें* ज़्या चाहिए: हम कहते हैं ''अपने सज़्बन्ध में मुझे यह या वह *चाहिए*।'' सुनहरी नियम हमें स्वार्थ से अपने आप को भूलने की ओर ले आता है। यह हमें दूसरे व्यज़्ति की आवश्यकता पर पहले विचार करने की चुनौती देता है। प्रभु के शज़्दों में ''जैसा तुम चाहते हो कि लोग तुज़्हारे साथ करें, तुम भी उन के साथ वैसा ही करो'' (लूका 6:31) मिलता है।

यीशु ने कहा कि ''व्यवस्था और भविष्यवज़्ताओं की शिक्षा यही है'' (मज़्ती 7:12ख)। व्यवस्था तथा भविष्यवज़्ताओं को छोटे करके कैप्सूल के आकार का बनाना हो,[24] तो आपके पास यही बचेगा: ''जैसा व्यवहार आप लोगों से चाहते हैं वैसा ही उनके साथ भी करें।''

विनाश या जीवन (मज़ी 7:13, 14)

यीशु मज़ी 7:13 के शज़्दों के साथ अपने उपदेश को समेटने लगा। इस उपदेश की अन्तिम आयतों में झूठे शिक्षकों के विरुद्ध एक चेतावनी है (मज़ी 7:15–20), परन्तु मुज़्यतया इनका सज़्बन्ध मसीह के चेलों द्वारा उसकी शिक्षा के अनुसार जीवन बिताने से है। यीशु ने यह कभी नहीं चाहा कि उसके इस उपदेश को दीवार पर लिखकर लोग तारीफ करें कि बहुत अच्छा लिखा है, बल्कि उसकी इच्छा थी कि यह उसके मानने वालों के जीवनों में दिखाई दे।

13 और 14 आयतों की भिन्नता स्पष्ट है। दो ही मार्ग हैं, और केवल दो ही मार्ग हैं, जिनमें से होकर हर कोई जा सकता है: जीवन की ओर जाने वाला मार्ग सकरा और विनाश की ओर जाने वाला सरल या चौड़ा मार्ग है (देखें लूका 13:23, 24)। सकरा या तंग मार्ग कठिन रास्ता है और इस पर चलने के लिए आवश्यक बलिदान करने को "कुछ" ही लोग तैयार होते हैं। चौड़ा मार्ग आसान रास्ता है, प्रसिद्ध रास्ता है, जिसे "बहुत से" लोग चुनते हैं। (बहुत से लोगों को इस कड़वी सच्चाई का सामना करना अच्छा नहीं लगता, परन्तु यदि यीशु की बातों का कोई अर्थ है तो इनमें यही शिक्षा है कि नाश होने वाले लोग बचाए जाने वालों की अपेक्षा अधिक होंगे।)

हम सकरे या कठिन मार्ग पर कैसे चल सकते हैं? अगली आयतों में यीशु ने इस प्रश्न का यह उज़र दिया कि जो कुछ वह हमें बताता है, उसे मानकर हम ऐसा कर सकते हैं (मज़ी 7:21–27)। इतना ही महत्वपूर्ण यह जानना भी है कि हम सकरे मार्ग पर कैसे *खड़े* रह सकते हैं? नया नियम यह नहीं सिखाता कि सकरे मार्ग पर चलने वालों के लिए इसे छोड़ना असज़्भव है (देखें 1 कुरिन्थियों 10:12; याकूब 5:19, 20)। दुख की बात है कि सकरे मार्ग पर चलने वाले बहुत से यात्री इसकी बंदिशों से तंग आकर चौड़े या आसान मार्ग पर चलने के लिए इसे छोड़ देते हैं। हम तंग मार्ग पर कैसे स्थिर रह सकते हैं? मसीह की आज्ञाओं को मानते *रहकर* (मज़ी 7:24–27 पर विचार करें)।

किसी भी मार्ग पर चलें, उससे ज़्या फर्क पड़ता है? एक तो *जीवन* अर्थात परमेश्वर के साथ अनन्त जीवन की ओर ले जाता है (रोमियों 2:7)। दूसरा *विनाश* अर्थात परमेश्वर की उपस्थिति से दूर, अनन्तकाल के विनाश की ओर ले जाता है (2 थिस्सलुनीकियों 1:9)। आसान शज़्दों में, एक तो स्वर्ग के राजमार्ग पर जा रहा है, जबकि दूसरा नरक के निचले मार्ग पर।

बुरा या अच्छा फल (मज़ी 7:15-20; लूका 6:43-45)

जिस मार्ग पर हम चलते हैं, उससे अन्तर का एक लोक[25] बनता है। नहीं, मैं इसे बदलता हूं: जिस मार्ग पर हम चलते हैं, उससे अन्तर का एक *अनन्तकाल* बनता है। शैतान नहीं चाहता कि मनुष्य इस बात को समझे! वह लोगों के मन में यह बात डालता है कि वे जिस मार्ग में भी हैं (अर्थात, उनका जीवन जैसा भी है), या चाहे वह मार्ग चौड़ा है या तंग, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। इस काम के लिए वह झूठे शिक्षकों का इस्तेमाल करता है।

पहाड़ी उपदेश के अगले भाग में झूठे भविष्यवक्ताओं के विरुद्ध एक चेतावनी दी गई है।

भविष्यवक्ता परमेश्वर की तरफ से बोलने वालों को कहा जाता था; झूठा भविष्यवक्ता उसे कहा गया है, जो परमेश्वर की ओर से बोलने का दावा तो करें परन्तु परमेश्वर की ओर से न हो। वास्तव में यीशु ने झूठे भविष्यवक्ताओं को "भेड़ों के भेष में ... फाड़ने वाले भेड़िये" कहा (देखें मत्ती 7:15)। बाहर से देखने पर उनका असली रूप दिखाई नहीं देता। अपने झूठ पर सच्चाई की पतली सी परत डालकर वे भले कामों के चोगे में अपनी बुराइयों को ढक लेते थे (देखें मत्ती 7:22, 23)।

हो सकता है कि मसीह अपने सुनने वालों को विशेष तौर पर शास्त्रियों और फरीसियों की शिक्षाओं के प्रति सावधान कर रहा हो, परन्तु शुरू से लेकर अब तक झूठे शिक्षकों के कारण कलीसिया को बड़ी हानि हुई है (मत्ती 24:11, 24; प्रेरितों 20:29, 30; 2 पतरस 2:1)। यह आवश्यक है कि हम झूठे भविष्यवक्ताओं की समय पर पहचान कर लें। हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? हम उन्हें उनके "फल" से पहचान सकते हैं: उनके जीवनों से और उनकी शिक्षा के फल से (मत्ती 7:16-20; देखें रोमियों 16:17)। उनके जीवनों तथा उनकी शिक्षा की तुलना परमेश्वर के वचन से की जानी चाहिए (1 यूहन्ना 4:1; प्रेरितों 17:11)।

लूका के वृत्तांत में यह जोड़ा गया है कि जो भी कोई कुछ सिखाता है, उससे उसके मन की बात सामने आती है, "क्योंकि जो मन में भरा है वही उसके मुंह पर आता है" (लूका 6:45)।[26] यीशु की ताड़ना आज भी प्रासंगिक है और तब भी थी जब उसने "झूठे भविष्यवक्ताओं से सावधान" (मत्ती 7:15क) रहने के लिए कहा था।

कहना या करना (मत्ती 7:21-23)

क्या सभी झूठे भविष्यवक्ताओं को पता है कि वे झूठे भविष्यवक्ता हैं? क्या चाकल या चौड़े मार्ग पर चलने वाले सब लोग जानते हैं कि वे विनाश के मार्ग पर जा रहे हैं? शायद नहीं। मत्ती 7:21-23 में यीशु के शब्दों से पता चलता है कि कोई अपने आप को धोखा दे सकता है:

> जो मुझ से, हे प्रभु, हे प्रभु कहता है, उनमें से हर एक स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न करेगा, परन्तु वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है। उस दिन बहुतेरे मुझ से कहेंगे; हे प्रभु, हे प्रभु, क्या हमने तेरे नाम से भविष्यवाणी नहीं की, और तेरे नाम से दुष्टात्माओं को नहीं निकाला, और तेरे नाम से बहुत से अचम्भे के काम नहीं किए? तब मैं उनसे खुलकर कह दूंगा कि मैं ने तुम को कभी नहीं जाना है, हे कुकर्म करने वालो, मेरे पास से चले जाओ।

जब भी मैं इन शब्दों को पढ़ता हूं, तो मेरा मन उदास हो जाता है।

"उस दिन" न्याय के दिन को कहा गया है (प्रेरितों 17:31)। इस उदाहरण में, क्या न्याय के दिन विरोध करने वालों ने वास्तव में वह किया था, जिसका वे दावा कर रहे थे?

यीशु ने उनके दावों को गलत नहीं ठहराया; परन्तु भले काम करने के बावजूद, वे शैतान के कर्मचारी भी थे, ज़्योंकि मसीह ने उन पर कुकर्म करने का आरोप लगाया। उनके द्वारा किए गए ठीक काम भी तुलनात्मक तौर पर महत्वहीन हैं। आयत 23 के सबसे महत्वपूर्ण (और सबसे दुखद) शज़्द "मैंने तुम को कभी नहीं जाना" हैं।

बाइबल में, "जाना" शज़्द का अर्थ परमेश्वर और मनुष्य के बीच सज़्बन्ध सहित, "निकट सज़्बन्ध होना"[27] हो सकता है (1 कुरिन्थियों 1:21; गलतियों 4:9; फिलिप्पियों 3:10)। पौलुस ने लिखा है, "प्रभु अपनों को पहचानता है" (2 तीमुथियुस 2:19)। जब यीशु ने कहा, "मैंने तुज़्हें कभी नहीं जाना है" तो वह यह ज़ोर दे रहा था कि आरोपियों का उसके साथ उद्धार पाए होने से कभी कोई सज़्बन्ध नहीं था। वे उसकी शिक्षा को मानकर उसके पीछे नहीं चले थे, बल्कि उन्होंने मालिक और प्रभु के रूप में अपने जीवन उसे देने से इनकार कर दिया। उनके भले काम जो भी हों, परन्तु वे "मसीह में" रहकर नहीं किए गए थे (2 कुरिन्थियों 5:17; इफिसियों 2:13; 3:21; रोमियों 16:3, 9), बल्कि मसीह से बाहर किए गए थे।[28]

हम यह कैसे जान सकते हैं कि यीशु हमें "जानता" है? ज़्या होंठों से उसकी स्तुति करना ही काफ़ी है? ज़्या "हे प्रभु, हे प्रभु" कहना ही काफ़ी है? नहीं, मसीह ने कहा कि हमारे लिए परमेश्वर की इच्छा पूरी करनी आवश्यक है। ज़्या सज़्पूर्ण आज्ञाकारिता आवश्यक है? नहीं, ज़्योंकि ऐसा असज़्भव है (रोमियों 3:23)।[29] परन्तु यदि हम सुनिश्चित होना चाहते हैं कि यीशु हमें जानता है तो हम वही करेंगे जो मसीही बनने के लिए प्रभु हमें कहता है (रोमियों 6:3–7, 11, 17, 18, 23; गलतियों 3:26, 27), और फिर अपने भरसक प्रयास से उसकी आज्ञा मानेंगे। जे. डज़्ल्यू. मैज़्गर्वे ने इसे इस प्रकार कहा है। "... शरीर की निर्बलताओं के बीच प्रतिदिन के पाप की क्षमा की शर्तों को पूरा करते हुए आज्ञा मानना, परमेश्वर का सामर्थ दिलाता है।"[30]

सुनना या करना (मज़्ती 7:24-27; लूका 6:46-49)

हमने देखा है कि पहाड़ी उपदेश के अन्तिम शज़्दों में मसीह की आज्ञा मानने की अनिवार्यता पर ज़ोर दिया गया है। यीशु ने इस उपदेश को दो मकान बनाने वालों का उदाहरण देकर खत्म किया: बुद्धिमान ने अपना घर चट्टान पर बनाया, जबकि मूर्ख ने रेत पर बनाया। यीशु ने कहा कि पहले वाले की तुलना उस व्यज़्ति से की जा सकती है, जिसने उसकी बातों को सुना और उन पर अमल किया, जबकि दूसरे की तुलना उससे की जा सकती है, जिसने उसे सुना तो सही, लेकिन माना नहीं।

लूका का वृज़ांत इसमें यह जोड़कर वृद्धि कर देता है कि पहले आदमी ने "भूमि गहरी[31] खोदकर चट्टान पर नेव डाली" (लूका 6:48), जबकि दूसरे ने "मिट्टी पर बिना नेव का घर बनाया" (लूका 6:49)। एक बढ़ई के रूप में (देखें मरकुस 6:3), मसीह पज़्की नींव डालने के महत्व को समझता था, परन्तु मकान बनाने के कार्य में थोड़ा बहुत या बिल्कुल अनुभव न रखने वाला व्यज़्ति भी समझ सकता है कि मकान बनाने के लिए

अच्छी नींव होनी आवश्यक है। इसी प्रकार हर जीवन के लिए मज़बूत नींव का होना भी जरूरी है।

हमारे युग की एक त्रासदी यह है कि बुहत से जीवनों का निर्माण सांसारिक विचार की खिसकने वाली रेत पर किया जाता है। हमारे जीवनों को यीशु और उसके वचन की पज़्की नींव की आवश्यकता है (देखें 1 कुरिन्थियों 3:11; इफिसियों 2:20)। हमें स्थिरता मिल सकती है, यदि (और केवल यदि) हम मसीह की इच्छा पूरी करें।

इस पद में विषमता करना बनाम न करना है। संसार भर के बच्चे चट्टान पर घर बनाने वाले बुद्धिमान और रेत पर मकान बनाने वाले मूर्ख वाला गीत गाते हैं। जब मैं इस गीत की अगुआई करता हूं, तो मैं उस पर ज़ोर देने के लिए, जिस पर यह गीत आधारित है, अन्तिम आयत को उससे मिलाने के लिए बदल देता हूं:

> सो अपने जीवन को *प्रभु के वचन पर* बनाओ;[32]
> अपने जीवन को *प्रभु के वचन पर* बनाओ;
> अपने जीवन को *प्रभु के वचन पर* बनाओ;
> और आशीषें नीचे आएंगी।
>
> आशिषें नीचे आती हैं जब हम उसकी इच्छा मानते;
> आशिषें नीचे आती हैं जब हम उसकी इच्छा मानते;
> आशिषें नीचे आती हैं जब हम उसकी इच्छा मानते;
> सो अपने जीवन को *प्रभु के वचन पर* बनाओ।

चेले बनने वालों को लूका के वृज़ांत वाले यीशु के शज़्द आज भी चुनौती देते हैं: ''जब तुम मेरा कहना नहीं मानते, तो ज़्यों मुझे हे प्रभु, हे प्रभु, कहते हो?'' (लूका 6:46)।

सारांश
(मज़ी 7:28, 29)

''जब यीशु ये बातें कह चुका, तो ऐसा हुआ कि भीड़ उसके उपदेश से चकित हुई; ज़्योंकि वह उनके शास्त्रियों के समान नहीं, परन्तु अधिकारी की नाईं उन्हें उपदेश देता था'' (मज़ी 7:28, 29)। लगभग दो हज़ार साल बाद आज भी पहाड़ी उपदेश अपने आप में सबसे हटकर है। इसे पढ़ें; इसका अध्ययन करें; परन्तु सबसे बढ़कर इसे व्यवहार में लाने की पूरी कोशिश करें।

मैंने यह ध्यान दिलाते हुए कि मसीह का उपदेश उन दो मार्गों के बारे में बताता है जिन पर हम चल सकते हैं, यह पाठ आरज़्भ किया (मज़ी 7:13, 14)। संसार लोगों में धनी और निर्धन, सुन्दर और सरल, गुणी और गंवार, सफल और असफल कहकर अन्तर करता है। अन्त में केवल एक ही अन्तर किया जाएगा: कि हम उस कठिन या तंग मार्ग पर हैं जो

अनन्त जीवन की ओर ले जाता है या उस सरल या चौड़े मार्ग पर, जो अनन्त विनाश की ओर ले जाता है (मत्ती 25:46; यूहन्ना 3:16; रोमियों 2:7, 8; 6:23)। हमारे लिए ज्वलंत प्रश्न यह है कि "मैं किस मार्ग पर चल रहा हूं?" आप किस मार्ग पर चल रहे हैं? मैं दोहराता हूं: वचन हमें दो तरह के मार्गों के बारे में बताता है, जिन्हें हम चुन सकते हैं। इनमें से एक जीवन की ओर और दूसरा विनाश की ओर जाता है। सही पसन्द चुनने में परमेश्वर हम सब की सहायता करे।

टिप्पणियां

[1]जॉन आर. डब्ल्यू. स्टॉट, *द मैसेज ऑफ़ द सरमन ऑन माउंट* (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटर वर्सिटी प्रैस, 1978), 15. [2] ई.स्टैनले जोनस, *द क्राइस्ट ऑफ़ द माउंट* (नेशविले: अबिंग्डन प्रैस, 1931), 14. [3]हार्वे स्कॉट, *द सर्मन ऑन द माउंट* (टैक्सरकाना, टैक्सस: द क्रिश्चियन हैल्पर, 1947), 3। [4] KJV में मत्ती 7:13, 14 में "strait" दो बार आता है। "Strait" का अर्थ "तंग" होता है, परन्तु बहुत से लोग जब इस शब्द को सुनते हैं तो इसे "straight" समझते हैं, जिसका अर्थ "सीधा" है। (दोनों के सपैलिंग्स में बहुत कम अन्तर है)। [5]देखें लूका 12:33, 34। [6]स्वर्ग में धन इकट्ठा करने के ढंग के एक उदाहरण के लिए, देखें 1 तीमुथियुस 6:18, 19। [7]जहां तक हम जानते हैं, उस जमाने में बैंक नहीं होते थे, इसलिए लोग अपना धन घरों में या भूमि के नीचे गाड़ देते थे, जहां प्राकृतिक आपदा के समय वह नष्ट हो जाता था (याकूब 5:2, 3क) या चोरों द्वारा निकाल लिया जाता था। [8]देखें लूका 11:34–36। [9]मेरी NASB वाली बाइबल में एक टिप्पणी में यह जानकारी दी गई है। KJV में "bountiful eye" है। [10]मन का हाल बताने के लिए आंख के और उदाहरणों के लिए, देखें व्यवस्थाविवरण 15:9; 28:56; नीतिवचन 23:6; मत्ती 20:15। (मूल लेख में इन सब आयतों में "आंख" शब्द है यद्यपि अंग्रेजी व हिंदी अनुवाद में यह कहीं–कहीं नहीं मिलता।)

[11]जे.डब्ल्यू. मैक्गर्वे एण्ड फिलिप वाई. पैंडलटन, *द फ़ोरफ़ोल्ड गॉस्पल ऑर ए हारमनी ऑफ़ द फ़ोर गॉस्पल्स* (सिंसिनटी: स्टैंडर्ड पब्लिशिंग फाउंडेशन, पृष्ठ नहीं।), 256 से लिया गया। [12] देखें लूका 16:13. [13]पाप के या परमेश्वर के दास होने पर सामान्य शिक्षा के लिए, देखें रोमियों 6:16–18। [14]जॉन फ्रैंक्लिन कार्टर, *ए लेमैन'स हारमनी ऑफ़ द गॉस्पल्स* (नेशविले: ब्रॉडमैन प्रैस, 1961), 110। [15]"पहले उसके राज्य और धर्म की खोज" करने का अर्थ परमेश्वर के राजा होने को स्वीकार करना और उसकी शाही आज्ञाओं का पालन करने की कोशिश करना है। मत्ती 16:18, 19 में "राज्य" तथा "कलीसिया" को अदल–बदल कर इस्तेमाल किया गया है, इसलिए हम भी अपनी रुचियों से बढ़कर प्रभु की कलीसिया की रुचियों को लागू कर सकते हैं। [16]मैक्गर्वे एण्ड पैंडलटन, 259 से लिया गया। [17]ये बातें कहकर यीशु भविष्य के लिए तैयारी कर रहा था अर्थात वह अपने चेलों को उस समय के लिए तैयार कर रहा था, जब उसने संसार से चले जाना था। पुराने नियम में, भविष्य की तैयारी के सिद्ध उदाहरणों के रूप में चींटियों को आगे रखा गया था (नीतिवचन 30:25)। आगे की सोचने पर और आयतों के लिए (जो बिना सोचे या कम सोच रखकर कार्य करने के विपरीत है), देखें नीतिवचन 21:5; 25:8; और 2 कुरिन्थियों 8:20, 21. [18]हम उस सब के लिए जो परमेश्वर ने हमें सौंपा है, वह हमारी संपत्ति हो या समय परमेश्वर के भंडारी हैं। हमें भंडारीपन के प्रति वफादार होना आवश्यक है (देखें 1 कुरिन्थियों 4:2)। [19]मत्ती 7:1–6 की विस्तृत चर्चा के लिए, "दोष मत लगाओ" और "दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक कैसे रहें" पाठ देखें। [20]लूका 6:39 कहता है कि यीशु "ने उनसे एक दृष्टांत कहा।" हमारे इस अध्ययन में "दृष्टांत" शब्द का इस्तेमाल पहली बार आया है। दृष्टांतों पर इस भाग में, आगे विस्तार से चर्चा की जाएगी।

[21]7:7–11 के इससे पहली और बाद की आयतों के सम्बन्ध में और जानने के लिए, इस शृंखला में

अगले दो प्रवचन देखें।[22]पवित्र शास्त्र में हमारे स्वर्गीय पिता के हमारे सांसारिक पिताओं की तरह हमारे साथ व्यवहार करने की और तुलनाएं की जाती हैं। (उदाहरण के लिए, देखें, इब्रानियों 12:4-13.) परन्तु हमें इस बात में सतर्क रहना होगा कि यह निष्कर्ष न निकालें कि हमारा स्वर्गीय पिता *हर* बात में हमारे सांसारिक पिताओं की तरह नहीं है। हर सांसारिक पिता अपने बच्चों के साथ व्यवहार में गलतियां करता है, परन्तु परमेश्वर गलती नहीं करता। कुछ लोगों ने मत्ती 7:7-11 का यह सिखाने के लिए कि परमेश्वर किसी को कभी नरक नहीं भेजेगा, इस्तेमाल करने की कोशिश की है, क्योंकि (उनका कहना है कि) कोई सांसारिक पिता अपने बच्चों के साथ ऐसा नहीं कर सकता। इन पदों की इस प्रकार व्याख्या करने का अर्थ न्याय के बारे में इन स्पष्ट बातों में विरोधाभास उत्पन्न करना है (जैसे मत्ती 25:31-46)।[23]सुनहरी नियम पर विस्तृत चर्चा के लिए, देखें ''दूसरों के साथ प्रेमपूर्वक कैसे रहें।'' [24]विशेषतया, इसमें दूसरों के साथ कैसे मिलने पर व्यवस्था तथा भविष्य वक्ताओं की शिक्षा है। [25]''का एक लोक'' अलंकार की भाषा है। इसमें बहुत सी संख्या का सुझाव मिलता है। अलंकार की भाषा कोई नई नहीं है (देखें याकूब 3:6)।[26]हमारी बोलचाल के सम्बन्ध में लूका 6:45 सामान्य प्रासंगिकता दे सकता है: जो हमारे मन में होता है, वहीं मुंह पर आता है। परन्तु संदर्भ में ये शब्द विशेषतौर पर उन लोगों पर लागू किए गए हैं, जो परमेश्वर की ओर से बोलने का दावा करते हैं। मैं यहां एक चेतावनी जोड़ देता हूं: लूका 6:45 की व्याख्या ऐसे न करें, जिससे मत्ती 7:1 में दोष लगाने के विरुद्ध यीशु की शिक्षा का टकराव हो जाए। किसी की बातों पर जितनी भी अच्छी संरचना हो सकती है, करें।[27]इसमें वैवाहिक सम्बन्ध है। बाइबल कहती है कि आदम अपनी पत्नी के पास ''गया'' (उत्पत्ति 4:1; देखें KJV)। NASB में ''उसके साथ सम्बन्ध बनाए'' हैं। मेरे पास जो NASB की बाइबल है, उसमें विशेष टिप्पणी ''[मूलतः], *knew*'' है। पूरी बाइबल में, यहां तक कि नए नियम में भी यही ढंग इस्तेमाल किया गया है (देखें मत्ती 1:25; लूका 1:34 [देखें KJV])।[28]चाहें तो आप उदाहरण दे सकते हैं कि *कहां* प्रयास करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, दौड़ में भाग न लेने वाला व्यक्ति दौड़ने वालों से अधिक तेजी से भाग सकता है, परन्तु उसे विजेता का मुकुट नहीं मिलेगा (देखें 2 तीमुथियुस 2:5; 1 कुरिन्थियों 9:24)। ऐसे उदाहरणों का इस्तेमाल करें, जिन्हें आपके छात्र आसानी से समझ जाएं। [29]परमेश्वर का उसके अनुग्रह के लिए धन्यवाद करें (रोमियों 6:23)! [30]मैक्गर्वे एण्ड पैंडलटन, 268।

[31]मसीहियत इतनी गहरी है कि सांसारिक मन उसे समझ नहीं सकता। [32]मैं हाथ की हरकत को थोड़ा बदल देता हूं: ''प्रभु का वचन'' कहते हुए मैं अपने हाथों को खुली किताब की तरह खोलता हूं, और ''जब हम उसकी इच्छा पूरी करते हैं'' कहते हुए, एक हाथ से ऊपर की ओर इशारा करता हूं।